Department :- Ayurved Samhita & Siddhant

Topic :- चार्वाक दर्शन

दर्शन परिभाषा -

- दर्शन का विशेष तात्पर्य साधन है जिसके द्वारा वस्तु के तत्व की स्थिति का ज्ञान होता है अथवा जो वस्तु के तत्व की स्थिति देखने का साधन हो उसे दर्शन कहा जाता है |आचार्य चरक ने
- निर्विकारः परस्त्वात्मा सत्त्वभूतगुणेन्द्रियैः|

  चैतन्ये कारणं नित्यो द्रष्टा पश्यति हि क्रियाः||५६||
- आत्मा के लिए दृष्टा कहकर स्पष्ट कर दिया है कि देखने वाला दृष्टा एक मात्र आत्मा है

दर्शन शब्द की व्युत्पत्ति =दृश्यतेअनेनइतिदर्शनम

- जिसके द्वारा देखा जाय या वस्तु के तात्तिवक स्वरूप का ज्ञान प्राप्त किया जाय , उसे दर्शन कहा जाता है।
- दृश् प्रेक्षणे धातु (देखना अर्थ मे)मे ल्युट प्रत्यय (भाव ,करण ,अधिकरण अर्थ मे) लगाने से होती है। इसका अर्थ "देखने का साधन या करण "लगाया जा सकता है ।

दर्शन की व्यापकता:

- दर्शन की व्यापकता का बोध श्रीमद्भगवद्गीता से स्पष्ट हो जाता है अर्थात सर्वव्यापी अनंत चेतन में एक ही भाव से स्थितरूप योग से मुक्त हुए आत्मा वाला तथा सब में समभाव से देखने वाला योगी आत्मा को संपूर्ण भूतों में व्यापक देखता है एवं संपूर्ण भूतों को अपने में व्यापक देखता है सुख दुख को समान मानता है वही योगी है।
- दर्शन के व्यापक को आचार्य चरक ने निम्न रूप में व्यक्त किया कि यह आत्मा सर्वगत महान है इसीलिए आत्मा में व्यापकत्व है जब आत्मा मन को समाधिस्थ कर लेती है तो दर्शन का भी व्यापकत्व हो जाता है अर्थात व्यक्ति त्रिकालदर्शी तथा अबाधित तत्वज्ञान वाला हो जाता है

दर्शन की उत्पत्ति-

- समस्त ज्ञान का मूल वेद को कहा गया है अतः दर्शन का भी मूल वेद ही है स्वामी ओमानंदतीर्थ ने योगदर्शन की व्याख्या में कहा है कि वेदों में बतलाए हुए ज्ञान को मीमांसा दर्शन शास्त्रों में मुनियों द्वारा सूत्र रूप में की गई है इसप्रकार दर्शन की उत्पत्ति वेद मंत्रों के साथ हुई है |दर्शनों की उत्पत्ति एवं स्थापना में प्रतिपाद्य विषय निम्न चार हैं दर्शन कोई हो परंतु उनकी निम्न चार विषयों पर ही चिंतन परंपरा प्रारंभ हुई
- 1.**हेय** :दुख का वास्तविक स्वरूप क्या है ?जो त्याज्य है
- 2.**हेयहेतू** : दुखों उत्पत्ति का वास्तविक कारण क्या है ?
- 3. **हान** : दुख का नितांत अभाव क्या है अर्थात हान किस अवस्था का नाम है ?
- 4.**हानोपाय**: नितांत दुख निवृत्ति का साधन क्या है? इसप्रकार इन चारों विषयों के सम्यक रूप से प्रतिपादन करने के लिए दर्शन की उत्पत्ति हुई उपनिषदकाल दर्शनों का स्वर्णकाल रहा है उपनिषदों में दर्शनों का पूर्ण विकास

दर्शनों की संख्या व उनका विभाजन-

- भारत में दो प्रकार के दर्शनों के शिक्षण का प्रचलन है
- 1 भारतीयदर्शन
- 2 पाश्चात्यदर्शन
- क्योंकि आयुर्वेद का संबंध शत प्रतिशत भारतीय दर्शन से है भारतीय दर्शन दो श्रेणी में है
- 1. आस्तिकदर्शन
- 2. नास्तिकदर्शन
- आस्तिक का तात्पर्य जो ईश्वर है परलोक है ऐसी बुद्धि रखते हैं जो वेद अनुकूल विचारधारा वाले हैं
- नास्तिक का तात्पर्य जो ईश्वर नहीं है परलोक नहीं है ऐसी बुद्धि रखते हैं जो वेद के प्रतिकूल विचारधारा वालेहैं
- आस्तिकदर्शन = 6(न्यायदर्शन, वैशेषिकदर्शन, सांख्यदर्शन, योगदर्शन, मीमांसादर्शन, वेदांतदर्शन)
- नास्तिक दर्शन=3(चार्वाकदर्शन , जैनदर्शन, बौद्धदर्शन)

उद्देश्य

- विराट ब्रह्मांड के कण-कण में व्याप्त सूक्ष्म रहस्यों का बौद्धिक विश्लेषण कर उनमें मनुष्य का स्थान निर्धारित करना दर्शन शास्त्र का कार्य है मन के लिए आत्यंतिक दुखनिवृत्ति हेतु श्रुति हिमगिरी से दर्शन गंगा भारत की वसुंधरा में दर्शन की गंगा अवतरित हुई दर्शन की आध्यात्मिक चिंतन की पृष्ठभूमि पर भारतीय धर्म प्रतिष्ठित है

चार्वाक दर्शन-

प्रवर्तक- चार्वाक (ये वृहस्पति नामक आचार्य के शिष्य थे)

- पर्याय - नियतिवाद, अक्रियावाद, बार्हस्पत्यशास्त्र, लोकायतमत, नास्तिकवाद, जड़वाद (ऋग्वेद में 'असत्' से सत्' की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है— देवानां पूर्वे युगेऽसतः सदजायत (ऋग्वेद-10.72)।।
- यह शास्त्र वृहस्पति द्वारा उपदिष्ट होने के कारण 'बार्हस्पत्य' तथा चार्वाक द्वारा प्रसारित होने के कारण चार्वाक दर्शन के नाम से ख्यात हुआ।

- नागोजिभट्ट ने 'असत्' का अर्थ जड़ और सत् का अर्थ चैतन्य माना है स्वेच्छाचारिता, निष्ठाहीनता, स्वतन्त्रता, संशयवाद एवं भोगवाद के ये पृष्ठपोषक हैं। इन तथ्यों पर विचार करने से यह स्पष्ट पता चलता है कि 'चार्वाक' एक सम्प्रदाय विशेष का नाम है।

चार्वाक के बारे मे अन्य आचार्य के विचार

आचार्यशंकर की मान्यता है आत्मा की सत्ता नहीं मानने वाले ही लोकायत हैं

- हरीभद्रसूरी -षड्दर्शनसमुच्चय में 'चार्वाक लोकायत कहा है
- महर्षि बाल्मीकि निधि कुछ लोकायत ब्राह्मणों की चर्चा की है
- श्री वाचस्पति मिश्र ने भी लोकायत की चर्चा की है
- श्री आनंदजी झा के अनुसार लोक प्रशस्ति के कारण ही यह दर्शन लोकायत कहना आने लगा चार्वाक बृहस्पति के शिष्य थे इन्होंने इस दर्शन का लोगों में काफी प्रचार प्रसार किया इसलिए वह लोकायत दर्शन कहलाने लगा
- श्रीकृष्णमिश्र ने लिखा है- वाचस्पतिना प्रणीय चार्वाकाय समर्पितम् तेन च शिष्योपशिष्यद्वारेण बहुलीकृतं तन्त्रम् (प्रबोधचन्द्रोदय, द्वितीय अंक)।
- यास्क ने अपने निरुक्त (1.15-16) में चार्वाक नामक एकव्यक्ति का उल्लेख किया है, जिसने वेद को परस्पर असम्बद्ध तथा निरर्थक बतलाया है।
- श्वेताश्वतरोपनिषद्   में चार्वाक के संदर्भ में नियतिवाद, भूतवाद, प्रकृति- (स्वभाव) वाद ,यदृच्छावाद आदि मतों का भी उल्लेख मिलता है
- अत्र च परलोकस्य दुर्ज्ञेयत्वेन चार्वाकादिनास्तिकासम्मतत्वेन च परलोकं प्रमाणेन व्यवस्थापयितुं निर्णयार्थं प्रमाणप्रवृत्तिविषयं संशयमेव तावत् परलोके दर्शयति- संशयश्चात्रेत्यादि (CH.SU.11/6 CHAKRAPAANI)
- विरोधक=ब्राह्मण, बौद्ध और जैनाचार्य इन से घृणा करते थे

व्युत्पत्ति

- शब्द कौस्तुभ ने 'चारु' शब्द को वृहस्पति शब्द का पर्याय माना गया है।
- कुछ विचारक चार्वाक शब्द की व्युत्पत्ति चारुवाक् अर्थात मधुर वचन से करते हैं।

 चार्वाक के वचन बड़े ही मीठे, सरल एवं हृदयग्राह्य है|

 यावज्जीवेत्सुखंजीवेदृणंकृत्वा घृतं पिबेत्।

- भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः||
- कुछ विद्वानों का कहना है कि चार्वाक शब्द चर्व धातु से बना है, जिसका अर्थ है- 'चबाना'। इसमें भोजन, पान, भोग प्रभृति का उपदेश दिया गया है
- काशिकावृत्ति के उद्धरण के अनुसार कुछ विद्वान चार्वी शब्द से निष्पन्न चार्वाक शब्द को मानते हैं। चार्वी बुद्धि को कहते हैं और बुद्धि से सम्बद्ध होने के कारण इस आचार्य को चार्वीया चार्वाक कहते हैं

चार्वाक साहित्य के ग्रन्थ

1. **'बार्हस्पत्यसूत्र'** में चार्वाकसाहित्य के सारे सिद्धान्त इस ग्रन्थ में बीजरूप से संकलित हैं इनके अनुसार पृथ्वी, जल,तेज और वायु ही चार तत्त्व है। अर्थ और काम ही पुरुषार्थ है। मरण ही अपवर्ग है।

2 .**हरिभद्रसूरि रचित षड्दर्शनसमुच्चय** में भी चार्वाक की चर्चा आई है। इसमें चार्वाकदर्शन की कल्पना है तथा आठ श्लोकों में इस साहित्य का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

3.**माधवाचार्य** का एक ग्रन्थ है- **'सर्वदर्शनसंग्रह'** इसमें चार्वाकदर्शन के प्रायः सभी तथ्यों को संकलित करने की चेष्टा की गई है। चार्वाक-साहित्य में केवल प्रत्यक्ष को ही प्रमाण माना गया है। चार्वाकदर्शन के अनुसार जब आत्मा ही नहीं? तो फिर परलोक, पुनर्जन्म, धर्म-अधर्म और पुण्य पाप की मान्यता कैसी ? इसलिए जब तक जीवन है,मनुष्य को सुखपूर्वक जीना चाहिए ।मृत्यु के पश्चात मनुष्य जीवन-धारण नहीं करता । पुनर्जन्म नहीं होता ।

- अग्निरुष्णो जलं शीतं समस्पर्शस्तथानिलः।

  केनेदं चित्रितं तस्मात्स्वभावात्तद्व्यवस्थितः।। (सर्वदर्शनसंग्रह)

- आग को गर्म, जल को ठंड़ा, हवा को शीतल किसने बनाया ? काँटों में चुभन, पशु-पक्षियों में विभिन्नता किसने पैदा की? ये सब तो स्वभाव से ही पैदा होते हैं

चार्वाक दर्शन केसिद्धान्त

चार्वाकदर्शन को मुख्यतः हम तीन भागों में विभाजित देखते हैं-

- तत्त्वमीमांसा,
- आचार या नीतिमीमांसा
- ज्ञान अर्थात प्रमाण- मीमांसा

तत्त्वमीमांसा,

- चार्वाकदर्शन केवल इन्द्रिय-सन्निकर्ष ज्ञानजन्य प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानता है, क्योंकि यथार्थ ज्ञान या प्रमाण ही केवल प्रत्यक्षात्मक है। आँखों से जो परे है, वे ही परोक्ष हैं और परोक्ष असत् हैं प्रत्यक्ष से परोक्ष विषयों का ग्रहण नहीं हो सकता और प्रत्यक्ष हमें भौतिक वस्तुओं का ही होता है। **प्रत्यक्षाभाव के कारण आत्मा, परमात्मा, स्वर्ग और नरक में ये विश्वास नहीं करते हैं। ये केवल जड़त्व   अर्थात भौतिक वस्तुओं की सत्ता ही स्वीकार करते हैं। अतः ये भौतिकवादी (Materialist) कहलाते हैं|**
- इनके मत में चार प्रकार का जड़त्त्व अर्थात भूततत्त्व है- पृथ्वी, जल, तेज और वायु इन्हों चारों तत्त्वों के यथोचित संयोग होने पर शरीर इन्द्रिय और इन्द्रिय के विषय इनको ग्राह्यता होती है ये चार पदार्थ ही अपने आण्विक अवस्था मे इस जगत के मूल कारण है |
- चार्वाक आकाश को तत्त्व रूप में स्वीकार नहीं करते हैं|

- आत्मा - चार्वाकों ने चैतन्य विशिष्ट देह को ही आत्मा माना है। आत्मा की कोई अलग सत्ता इसने स्वीकार नहीं किया है इन भौतिक तत्त्वों के संयोग से ही चैतन्य की उत्पत्ति होती है |

  (चैतन्यविशिष्टःकायःपुरुषः) ।

- ईश्वर—भारत के प्राय: सभी दर्शन ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, केवल चार्वाक दर्शन ही ईश्वर की सत्ता को स्वीकार नहीं करता है।
- कर्मसिद्धान्त और पुनर्जन्म- चार्वाक कर्मसिद्धान्त और पुनर्जन्म का उपहास करते हुए कहते हैं कि यदि आत्मा मृत्यु के पश्चात पुनर्जन्म ग्रहण करती है तो अपने पूर्वजन्म में किये गये कर्मों का उसे स्मरण क्यों नहीं रहता ? यदि आत्मा नित्य है और मृत्यु के बाद इस शरीर से निकलकर कर्मफल भोगने के लिए परलोक चलो जाती है तो कभी-कभार अपने शोकाकुल बिलखते परिवार से मिलने क्यों नहीं चली आती है ? सर्वदर्शनसंग्रह में इसपर अच्छा कटाक्षदर्शनीय है—

  यदि गच्छेत् परं लोकं देहादेव विनिर्गतः।

आचार मीमांसा या नीति मीमांसा=

भारतीय दार्शनिक मानव मात्र के लिए धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष- चारो को पुरुषार्थ का साधन मानते हैं-

धर्मार्थकाममोक्षाणां प्राणाः संस्थितिहेतवः ।

किन्तु चार्वाक दार्शनिक इन चारों पुरुषार्थो में प्रथम और अन्तिम पुरुषार्थों की मान्यता नहीं देते |आचार या नीति की पृष्ठभूमि पर चार्वाक यदृच्छावादी या सुखवादी हैं।

- चार्वाक का सुखवाद - चार्वाकों की दृष्टि में केवल अर्थ और काम ही पुरुषार्थ है। इनकी दृष्टि में काम ही पुरुषार्थ है। काम का कोषगत अर्थ है— चाह, कामना, इन्द्रिय या विषय सुख की इच्छा है | और इच्छा की पूर्ति का साधन एकमात्र अर्थ है |
- चार्वाक ज्योतिष्टोम यज्ञ का उपहास करते हुए कहते हैं कि ज्योतिष्टोम में मारा गया पशु यदि सीधे स्वर्ग जाता होता तो यज्ञकर्त्ता अपने पिता का वध कर उसे भी स्वर्ग भेज देता।

चार्वाक ज्ञान मीमांसा

- चिन्तन शील ज्ञान के द्वारा हम यथार्थ के द्वार तक पहंचते हैं, किन्तु केवल विचार के सहारे हम सत्य में प्रवेश नही कर सकते । सम्पूर्ण मानवीय प्रकृति की पूर्णता से ही वहाँ तक पहंचा जा सकता है । यदि हम मानवीय प्रकृति की सीमाओं को पार कर आगे जाना चाहते है तो हमें देह और मन के गुणों का अभ्यास करना होगा । शरीर को पाप या बुराई के उद्गम उपकरण के रूप में देखना होगा ।
- **प्रत्यक्ष की प्रामाणिकता-** यथार्थानुभवःप्रमा अर्थात जो वस्तु जिस रूप में है,उसे उसी रूप में समझना प्रमा है। प्रमायाःकरणं प्रमाणम्। दर्शनशास्त्र के अनुसार प्रमा के करण अर्थात साधन को ही प्रमाण कहा गया है। न्यायशास्त्र में प्रमाण को पारिभाषित किया है-प्रमाता येनार्थं प्रमिणोति तत्प्रमाणमिति (न्यायभाष्य-1.1.1)
- चार्वाक केवल एक मात्र प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानते हैं- प्रत्यक्षमेवैकं प्रमाणम् (बार्हस्पत्यसूत्र 20)
-

चार्वाक प्रत्यक्ष ज्ञान को ही यथार्थ ज्ञान का साधन मानते हैं। बृहदारण्यकोपनिषद् (5.14.4) में भी इसी तथ्य का विश्लेषण उपलब्ध है।

चक्षुरिन्द्रियग्राह्यं विषयमेव विश्वसनीयम्।

- चार्वाकों ने इन्द्रियों के द्वारा प्रत्यक्षीकृत जगत को ही सत्य माना है और उस से भिन्न पदार्थों को असत कहा है। जैसे त्वगिन्द्रिय के द्वारा कोमल-कठोर, गर्म या ठण्डा या समशीतोष्ण आदि भावों का बोध होता है रसनेन्द्रिय अर्थात जीभ से कटु अर्थात चिरपिरा , कषाय अर्थात कसैला, अम्ल अर्थात खट्टा एवं मधुरादि रसों का ग्रहण होता है। इसी तरह घ्राणेन्द्रिय अर्थात नाक से सुगन्ध और दुर्गन्ध का बोध होता है। चक्षुरिन्द्रिय अर्थात् आँखों से धरती, आकाश, मनुष्य पशु, जड़-चेतन, नदी, पहाड़ आदि के ज्ञान हमें प्राप्त होते हैं। श्रोत्रेन्द्रिय अर्थात कानों से गीत, नाद, प्रिय अप्रिय ध्वनि का बोध होता है। यही पाँच प्रकार की अनुभूत वस्तु यें चार्वाकों की दृष्टि में प्रमाण भूत मानी जाती हैं। इनकी दृष्टि में अनछुये, अनचखे, अनसूंघे, अनदेखे, अनसुने पदार्थों की सत्ता किसी भी प्रकार से मान्य नहीं है

- **अनुमान की अप्रामाणिकता =**चार्वाक किसी भी स्थिति में अनुमान को प्रमाण के रूप में मानने को तैयार नहीं है

नानुमानंप्रमाणम् (बार्हस्पत्यसूत्र)।

सर्वदर्शन संग्रह में माधवाचार्य ने बड़े ही युक्ति पूर्ण ढंग से अनुमान प्रमाण का खण्डन किया है। अनुमान का आधार व्याप्ति ज्ञान माना गया है। व्याप्ति किसी पदार्थ के साहचर्य या स्वाभाविक सम्बन्ध को कहा जाता है। धूम और वह्नि में साहचर्य या स्वाभाविक सम्बन्ध है जैसे—इस पहाड़ में आग लगी है— पर्वतोऽयंवह्निमान्, क्योंकि जहाँ धुआँ होता है,

- इसका हमेशा सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता; क्योंकि धुआँ विना आग के भी दिखलाई पड़ सकता है। जैसे हेमन्त और शिशिर ऋतु में किसी नदी और सरोवर में प्रातःकालीन दिखने वाला धुआँ।
- आग विना धुआँ के भी दिखलाई पड़ सकता है। जैसे तप्त लौह पिण्ड में अग्नित्व तो है; पर धुआं नहीं है।

- स्वभाववाद - स्वभाव का अभाव तो कही नहीं दिखता |सर्वत्र सर्वदा रहने वाले स्वाभाविक सम्बन्ध को त्रैकालिक सम्बन्ध चार्वाक मानते हैं। लेकिन हम यदि किन्हीं दो वस्तुओं के स्वाभाविक साहचर्य को भूत और वर्तमान में मान भी लें तो भविष्य में नहीं मान सकते;क्योंकि भविष्य का ज्ञान हमें वर्तमान में नहीं हो सकता। अतः त्रैकालिक होने के आधार पर कोई सम्बन्ध स्वाभाविक नहीं स्वीकार किया जा सकता। इसी तरह जगत् की उत्पत्ति और विनष्टि का कारण भी चार्वाक उनके स्वभाव को ही मानते हैं। वस्तु का स्वभाव हो जगत की विचित्रता का भी कारण है। यथा—अपरे लोकायतिकाः स्वभावं जगतः कारणमाहुः स्वभावादेव जगद्विचित्रमुत्पद्यते, स्वभावतो विलयं याति (भट्टोत्पल-वृहत्संहिता की टीका-1.7) इस सन्दर्भ में चार्वाक की मान्यता है कि आग का गर्म होना, पानी का ठंढा होना, हवा का शीतल
- यहाँ मनुष्य के सुख का कारण न तो धर्म है और नही दुःख का कारण अधर्म है। मनुष्य स्वभाव से ही सुखी अथवा स्वभाव से ही दुःखी होता है। चार्वाक का यह सिद्धान्त दार्शनिकों के बीच स्वभाववाद के नाम से ख्यात है।

• **कार्य-कारण नियम—**

दार्शनिको के मत से कारण-कार्य का सम्बन्ध नियत या अनिवार्य है; किन्तु चार्वाकों को कारण कार्य का नियम मान्य नहीं है। उनकी दृष्टि में कारण कार्य का सम्बन्ध अनियत और आकस्मिक है; क्योंकि बिना कारण के भी कहीं कार्य होता है और कारण रहने पर भी कार्य नहीं होता है। फलतः कार्य कारण भाव के लिए उपाधियों का होना भी आवश्यक शर्त है। किसी भी कार्य की उत्पत्ति के समय सभी उपाधियों का प्रत्यक्ष दर्शन भी असम्भव है, अत: उनके बिना कार्य-कारण भी नहीं हो सकता । इस तरह कार्य-कारण भाव सम्बन्ध को या इसके आधार पर अनुमान प्रमाण की सिद्धि नहीं होती कारण भाव सम्बन्ध को या इसके आधार पर अनुमान प्रमाण की सिद्धि नहीं होती । इस परिस्थिति में चार्वाक का कहना है कि यह तो मणि, मन्त्र और औषधि की तरह आकस्मिक है, अनिवार्य नहीं। कभी-कभार अचानक मणि की प्राप्ति हो जाती है, मन्त्र भी निष्फल हो जाते हैं एवं औषधि सेवन भी कुछ रोगियों को रोग मुक्त करने में विफल हो जाता है। इन उदाहरणों में केवल सम्भावना दीख पड़ती है और सम्भावना जहाँ है,वहाँ अनिवार्यता नहीं है। यही कारण है कि चार्वाक लोग कार्य कारण भाव को मानने के लिए तैयार नहीं हैं।

- **शब्द प्रमाण की अमान्यता -** चार्वाक के अनुसार शब्द स्वतन्त्र प्रमाण नहीं है। शब्द से अर्थ का अनुमान ही होता है। जब अनुमान ही प्रामाणिक नहीं है तो शब्द भी अप्रामाणिक ही है। चार्वाक शब्द को अप्रामाणिक सिद्ध करने के लिए कई सशक्त तर्क उपस्थित करते हैं। उनका कहना है कि आप्तपुरुषों की सत्यता में विश्वास करना बिल्कुल मूर्खता है। यदि वे प्रत्यक्ष पदार्थों का वर्णन करें तो विश्वास रक्खा भी जाय पर अदृष्टलोक की अश्रुत पूर्व घटना या पदार्थ का वर्णन एक मनोरञ्जक कहानी के अतिरिक्त और क्या हो सकता है? वेदवाक्यों में परस्पर विरोध से अनर्थक शब्दों के प्रयोग से, अप्रत्यक्ष पदार्थों की कल्पना से प्रमाण ग्राह्यता नहीं है।
- अश्वमेध यज्ञ में गर्हित कार्यकलाप के वर्णन करने से यज्ञों में पशुबलि-विधान से मांसभक्षण जैसे अप्रासङ्गिक प्रथा से यह प्रतीत होता है कि वेद बनाने वाले भण्ड, धूर्त या निश्चय ही निशाचर थे ।वेदों की जितनी निन्दा, कुत्साया गर्हित आलोचना चार्वाकों ने की है उतना शायद ही किसी ने किया हो।

- वैदिक मन्त्रों में मुख्यतः तीन दोषों की परिगणना इन्होंने की है—

अनृत, व्याघात और पुनरुक्ति ।

कुछ वैदिक मन्त्र झूठे एवं काल्पनिक स्वर्ग-नरक जैसे विषयों का प्रतिपादन करते हैं तो कुछ मन्त्रों में व्याघात-जैसे दोष हैं अर्थात् एक स्थान पर किसी विषय के लिए एक मन्त्र है तो ठीक उसी विषय के लिए दूसरी जगह ठीक उसके विपरीत दूसरा मन्त्र उपलब्ध है इसी तरह पुनरुक्त दोष — एक ही मन्त्र का कई देवताओं के लिए कई स्थानों पर प्रयोग मिलता है। इसी तरह कई मन्त्रों की अनेक बार आवृत्ति भी है।

- इसके अतिरिक्त चार्वाकों की दृष्टि में अतीन्द्रिय एवं अलौकिक विषयों को सिद्ध करना शब्द प्रमाण का सबसे बड़ा दोष है। आत्मा-परमात्मा, लोक-परलोक, स्वर्ग-नरक,प्रभृति केवल शब्द प्रमाण से सिद्ध होता है । इसका प्रत्यक्ष ज्ञान तो नहीं हो सकता है। चार्वाक शब्द प्रमाण को ही नहीं मानते तो फिर उक्त विषयों में विश्वास का प्रश्न ही नहीं उठता।

धन्यवाद